बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 113

समझ से परे

केंद्रीय मंत्रिमंडल ने इस सप्ताह के आरंभ में निर्णय लिया कि यात्री परिवहन सीमा में इजाफा करके 11 वर्ष पुराने भारतीय विमानपत्तन आर्थिक विनियामक प्राधिकरण (एईआरए) की सीमा को कम किया जाएगा। हवाई अड्डों के निजीकरण के संदर्भ में देखा जाए तो सरकार का यह विचार सही प्रतीत नहीं होता। कैबिनेट के प्रस्ताव के मुताबिक एईआरए अधिनियम, 2008 में संशोधन किया जाएगा ताकि शुल्क दरें तय करने वाले नियामक को उन हवाई अड्डों के लिए जवाबदेह बनाया जा सके जहां सालाना 15 लाख से अधिक यात्री आवागमन करते हैं। इससे कम यात्रियों वाले अन्य सभी हवाई अड्डों का प्रशासन नागरिक विमानन मंत्रालय के हाथ में रहेगा। इस कदम से एक ही झटके में 17 हवाई अड्डे एईआरए की निगरानी दायरे से निकल जाएंगे और उसके पास केवल 13 हवाई अड्डे बचेंगे।

इस निर्णय पर आधिकारिक प्रतिक्रिया देते हुए सरकार ने कहा है कि वह हवाई अड्डों से आने वाले शुल्क मसलन पार्किंग शुल्क और लैंडिंग शुल्क, जमीनी सेवाओं के शुल्क आदि पर लगाम लगाना चाहती है। यह सच है कि विमानन कंपनियां अक्सर यह शिकायत करती हैं कि एईआरए द्वारा अपनाए गए मॉडल में शुल्क दरें बहुत अधिक हैं। एईआरए की स्थापना सरकार की हवाई अड्डों में निजी-सार्वजनिक भागीदारी की योजना के तहत की गई थी। परंतु यह स्पष्ट नहीं है कि आखिर सरकार एईआरए को एक तरह के हवाई अड्डों के नियमन के लिए सही मान रही है लेकिन दूसरी श्रेणी के लिए नहीं। इसके अलावा एईआरए ने अतीत में शुल्क दरों में कमी करने के लिए भी हस्तक्षेप किया है। उदाहरण के लिए उसने 2016 में जीएमआर द्वारा प्रवर्तित हैदराबाद अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर यूजर डेवलपमेंट शुल्क को समाप्त किया।

अहम बात यह है कि कैबिनेट के इस फैसले के माध्यम से तीसरी बार हवाई अड्डों के दोहरे नियमन का प्रयास किया गया है। 2018 में इस संबंध में एक विधेयक पेश किया गया था लेकिन वह मॉनसून सत्र और शीतकालीन सत्र दोनों में पारित होने में नाकाम रहा। अधिकारियों के मुताबिक ताजा प्रयास से सरकार को शुल्क दर तय करने के बाद बोली हासिल करने की क्षमता हासिल होगी। परंतु मौजूदा राजग सरकार अपने पिछले कार्यकाल के अंतिम कुछ महीनों में जिस मॉडल का अनुसरण कर रही थी, यह वैसा नहीं है। तब सरकार ने छह छोटे हवाई अड्डों के उन्नयन के लिए निजी क्षेत्र से बोली आमंत्रित की थी। ध्यान रहे कि इन बोलियों के माध्यम से ही मोदी सरकार के अधीन हवाई अड्डों के पीपीपी योजना के तहत विस्तार का पहला बड़ा प्रयास किया गया। हालांकि बोली की शर्तों में एईआरए अधिनियम का उल्लंघन किया गया था क्योंकि यहां टैरिफ और यात्री शुल्क के आधार पर आकलन किया गया था।

अहमदाबाद, तिरुवनंतपुरम, लखनऊ, मंगलूरु, गुवाहाटी और जयपुर के इन सभी हवाई अड्डों की बोली एक ही कारोबारी समूह ने हासिल की। यहां कई तथ्यों से अनियमितता उजागर होती है। पहला, ये छह निजी संचालन वाले हवाई अड्डे स्वतंत्र नियामक के बजाय राजनीतिक कार्यकारी की निगरानी में संचालित होंगे। दूसरा, बोलियों का आकलन उस अधिकतम शुल्क के आधार पर हुआ जो बोलीकर्ता भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण को चुकाएगा। ऐसे में मंत्रालय कम शुल्क कैसे सुनिश्चित करेगा? तीसरा, यह ध्यान देने वाली बात है कि एईआरए की स्थापना शुल्क को समुचित बनाने के लिए की गई थी क्योंकि हवाई अड्डा कारोबार में एकाधिकार का बोलबाला था। चौथा, छह हवाई अड्डों की बात करें तो कई सरकारी विभागों ने कहा कि एक ही बोलीकर्ता के कारण शुल्क के प्रतिस्पर्धी होने का आकलन नहीं हो पाएगा। सरकार को यह स्पष्ट करना चाहिए कि आखिर क्यों नागरिक उड्डयन मंत्रालय छोटे हवाई अड्डों के शुल्क के निर्णय लेने के लिए बेहतर रहेगा जबकि इसके लिए गठित विशिष्ट संस्था ऐसा नहीं कर पाएगी।

अजय मोहंती

किसानों तक पहुंचे बांधों का पानी

जब तक आप किसान को खेतों के लिए पानी नहीं देंगे तब तक आप उसे आत्महत्या करने से नहीं बचा सकते। बता रहे हैं मिहिर शाह

महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री ने 21 जुलाई, 2015 को राज्य विधानसभा में एक चर्चा के दौरान कहा कि देश के बड़े बांधों में से 40 फीसदी राज्य में हैं 'लेकिन राज्य का 82 फीसदी क्षेत्र बारिश के पानी पर निर्भर है। जब तक आप किसान के खेतों को पानी नहीं देंगे तब तक आप उसे आत्महत्या करने से नहीं बचा सकते। हम वाटरशेड और संरक्षण के अपने नजरिये को त्याग चुके हैं। हम हर जगह बांध बनाने से पहले किसी क्षेत्र के जल विज्ञान, भूविज्ञान और भौगोलिक स्थिति के बारे में विचार नहीं करते हैं। हमने बांधों को बढ़ावा दिया है, सिंचाई को नहीं। लेकिन अब इस स्थिति को बदलना होगा।'

देवेंद्र फडणवीस ने भारत में सिंचाई के संकट का सटीक ब्योरा दिया है। हम आजादी के बाद के 70 वर्षों मे लगातार 'आधुनिक भारत के मंदिर (बांध)' बनाते रहे, लेकिन ऐसा लगता है कि बार-बार सूखे और पानी की किल्लत की समस्या लगातार विकराल होती जा रही है। हम उनके निर्माण पर 4 लाख करोड़ रुपये से अधिक खर्च कर चुके हैं। लेकिन इन बांधों में जमा कई लाख करोड़ लीटर पानी उन किसानों तक नहीं पहुंचा है, जिनके लिए ये बनाए गए हैं।

जैसा पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह कहा करते थे कि 'खर्च और मिलने वाले लाभ का अंतर' बढ़ रहा है। सिंचाई की शब्दावली में यह सिंचाई की संभावना (11.3 करोड़ हेक्टेयर) और वास्तव में इस संभावना के इस्तेमाल (8.9 करोड़ हेक्टेयर) के बीच अंतर बढ़ रहा है। इस अंतर को खत्म करना उन अहम सुधारों की दूसरी किस्त का लक्ष्य होना चाहिए, जो भारत के जल प्रबंधन के लिए जरूरी हैं। 2.4 करोड़ हेक्टेयर का अंतर हमारे सिंचाई क्षेत्र की नाकामी को दर्शाता है। लेकिन यह आसान लक्ष्य है, जिस पर ध्यान देकर सिंचित रकबे में करोड़ों हेक्टेयर का इजाफा किया जा सकता है। हम यह काम नए बांध बनाने की आधी से भी कम लागत में कर सकते हैं। नए बांध बनाना महंगा हो रहा है। इनके निर्माण कार्य में बड़ी देरी हो रही है और प्रमुख परियोजनाओं की लागत 1,382 फीसदी बढ़ गई है। मझोले बांधों की लागत में भी औसत 325 फीसदी का इजाफा हो गया है। इसमें उनकी वह लागत शामिल नहीं है, जो मानव और पर्यावरण को चुकानी पड़ती है।

कावेरी, कृष्णा, गोदावरी, नर्मदा और ताप्ती जैसे प्रमुख नदी बेसिन पूर्णतया या आंशिक रूप से बंद हो गए हैं। इन पर आगे और बांध बनाने की मामूली संभावना हैं। गंगा के मैदानों में भौगोलिक क्षेत्र पूरी तरह समतल है, इसलिए वहां बांध बनाकर पानी को रोकना संभव नहीं है। वहीं ऊपर हिमालय में नए पर्वतों की तुलना में विश्व की सबसे नाजुक पारिस्थितिकी है, जहां कटाव की दर बहुत अधिक है। उनके ऊपरी जल ग्रहण क्षेत्र में मिट्टी को रोके रखने के लिए मामूली वनस्पति है। इसलिए हिमालय से निकलने वाली नदियों में ज्यादा गाद होती है। गाद के कारण कई बार बिजली टर्बाइन खराब हो जाते हैं। जलवायु परिवर्तन से नदियों के प्रवाह का अनुमान लगाना अत्यधिक अनिश्चित है। नदियों के प्रवाह क्षेत्र में बदलाव से भी कई क्षेत्र सूखे हो जाएंगे, जिसका स्थानीय लोगों की जीविका पर प्रतिकूल असर पड़ेगा।

ब्रह्मपुत्र घाटी और पूर्वी हिमालय में उसके आसपास के ऊंचे क्षेत्रों की सतही बनावट में नया बदलाव आ रहा है। इसका मतलब है कि गहरे गड्ढे बनने या नदी में पानी एवं तलछट के जरिये भौगोलिक क्षेत्र में बदलाव खतरनाक साबित हो सकता है। उत्तराखंड और नेपाल के हाल के घटनाक्रम इन वैज्ञानिक अनुमानों के दुखद सबूत हैं। इसलिए हमें कुछ ऐसे सुधारों की जरूरत है, जो मांग पक्ष के प्रबंधन पर केंद्रित हों। इसमें हमें लापरवाह तरीके से आपूर्ति बढ़ाने की हमारी सनक को छोड़ना होगा, जिसे भ्रष्टाचार की राजनीतिक अर्थव्यवस्था से भी ईंधन मिल रहा है।

इन सुधारों का दुनिया के बहुत से हिस्सों में परीक्षण भी हो चुका है। इनमें अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी, जापान एवं ऑस्ट्रेलिया जैसे विकसित राष्ट्र, चीन, श्रीलंका, फिलीपींस, इंडोनेशिया, वियतनाम एवं मलेशिया जैसे पूर्वी एवं दक्षिण एशियाई देश, उज्बेकिस्तान और किर्गिस्तान जैसे मध्य एशियाई देश, तुर्की एवं ईरान जैसे पश्चिम एशियाई देश, माली, नाइजर, तंजानिया और मिस्र जैसे अफ्रीकी देश और मैक्सिको, पेरू, कोलंबिया और चिली जैसे लैटिन अमेरिकी देश शामिल हैं। लेकिन इससे भी अहम भारत में गुजरात के धारोई एवं हाथुका, महाराष्ट्र में वाघाड, मध्य प्रदेश में सातक, मान और जोबट, बिहार में पीलीगंज और आंध्र प्रदेश में श्री राम नगर जैसे कमांड क्षेत्रों में किए गए सुधारों के सफल उदाहरण हैं। इन सफलताओं को अब बड़े पैमाने पर लागू किया जाना चाहिए।

यहां सुधारों का मतलब है कि बेहतर प्रबंधन और अंतिम छोर तक उपलब्धता पर ध्यान दिया जाए। इसके लिए जल को नौकरशाही से बाहर निकालना या इसका लोकतंत्रीकरण करना है। जब किसान को स्वामित्व का अहसास होता है तो सिंचाई प्रणाली के परिचालन एवं प्रबंधन की प्रक्रिया में बड़ा बदलाव आता है। किसान स्वेच्छा से अपने जल उपयोगकर्ता संघों को सिंचाई सेवा फीस चुकाते हैं। इन संघों का ढांचा पूर्णतया पारदर्शी एवं भागीदारी के तरीके से निर्धारित किया जाता है। जल उपयोगकर्ता संघ इस एकत्रित फीस का इस्तेमाल वितरण प्रणाली की मरम्मत एवं रखरखाव में करते हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि जल प्रत्येक खेत तक पहुंचे।

इस तरह का भागीदार सिंचाई प्रबंधन (पीआईएम) का मतलब है कि राज्य सिंचाई विभाग केवल मुख्य प्रणाली से लेकर द्वितीयक नहरों तक के तकनीक एवं वित्तीय रूप से जटिल ढांचे पर ध्यान केंद्रित करते हैं। तृतीयक स्तर की नहरें, छोटे ढांचे और फील्ड चैनल जल उपयोगकर्ता संघों को सुपुर्द कर दिए जाते हैं, जिससे अंतिम छोर पर उपलब्धता और नवोन्मेषी जल प्रबंधन संभव हो पाता है। इसमें फसल कटाई का उचित तरीका, जल वितरण में समानता, विवाद निपटान, जल-बचत की तकनीकों को अपनाना और फसल कृषि पद्धति आदि शामिल हैं, जिनसे पानी के इस्तेमाल में किफायत आती है। भारत पानी की सबसे कम किफायत वाले देशों में से एक है।

निस्संदेह भागीदार सिंचाई प्रणाली कोई रामबाण इलाज नहीं है। दुनियाभर में हुए अध्ययनों में बताया गया है कि किन स्थितियों में भागीदार सिंचाई प्रणाली कारगर साबित होती है। इन जरूरतों पर सावधानीपूर्वक ध्यान दिया जाना चाहिए। हालांकि इन मुद्दों से निपटना राज्यों का काम है, लेकिन राज्यों को प्रोत्साहन एवं सुविधाएं मुहैया कराने में केंद्र की भी अहम भूमिका है ताकि राज्य इन सुधारों को अमलीजामा पहनाएं। राज्यों को बड़ी बांध परियोजनाओं के लिए धनराशि जारी करने को विकेंद्रीकरण सुधारों और जल उपयोगकर्ता संघों को मजबूत बनाने की दिशा में प्रगति से जोड़ा जाना चाहिए।

हमने 12वीं योजना में इस उद्देश्य के लिए एक प्रोत्साहन फंड बनाने का प्रस्ताव रखा था। 'हर खेत को पानी' के राष्ट्रीय लक्ष्य के प्रति प्रतिबद्ध राज्य इसे अपने ऊपर अतार्तिक भार नहीं समझेंगे। किसी तरह की चिंता को दूर करने के लिए केंद्र को विभिन्न राज्यों के अधिकारियों और किसानों को जमीन पर भागीदार सिंचाई प्रबंधन का नमूना दिखाना चाहिए ताकि वे सीख सकें और इसे अपने कमांड क्षेत्र में अपना सकें।

अगर इन सुधारों को प्रभावी तरीके से लागू किया जाए तो सिंचित रकबे में करोड़ों हेक्टेयर का इजाफा तुरंत हो सकता है। वह भी मामूली लागत पर और बिना कोई नया बांध बनाए।

(लेखकर शिव नाडर यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर और योजना आयोग के पूर्व सदस्य हैं।)

रक्षा क्षेत्र को चाहिए अधिक धन मगर संभावना कम

दोधारी तलवार

अजय शुक्ला

अगले सप्ताह वर्ष 2019-20 का आम बजट पेश होने के बाद आलोचना का दौर शुरू हो जाएगा कि सैन्य हथियारों मसलन टैंक, तोप, युद्धपोत और लड़ाकू विमानों आदि के आधुनिकीकरण के लिए पर्याप्त पूंजी का आवंटन नहीं किया गया। जबकि शत्रु का मुकाबला करने के लिए इनकी जरूरत है। यह चिंता जायज है लेकिन इस दौरान एक अहम कमी पर ध्यान नहीं दिया जाता। सरकार ने एक लाख नए सैनिकों की भर्ती की मंजूरी दी है लेकिन उसके पास इसके लिए पर्याप्त फंड नहीं है।

बीते वर्षों में सैन्य बल लगातार बढ़ा है। सेना के वेतन में छह गुना इजाफा हुआ लेकिन राजस्व बजट में कोई खास बढ़ोतरी नहीं हुई। यह बमुश्किल महंगाई से पार पाने लायक ही बढ़ा। सैन्य नियोजकों को चिंता है कि वे वित्तीय अंत:स्फोट के करीब हैं। क्योंकि एक तो वेतन और पेंशन का बोझ बढ़ रहा है, वहीं दूसरी ओर वस्तु एवं सेवा कर के कारण लागत बढ़ रही है तथा जरूरी रक्षा आयात पर सीमा शुल्क लग रहा है।

श्रम शक्ति की बढ़ती लागत की बात करें तो 2008 से करीब एक लाख नए सैनिक शामिल होने के बाद सैन्य क्षमता 12.6 लाख हो गई है। वायु सेना के 1.55 लाख और नौसेना में 83,500 सैनिकों के साथ कुल सेना 15 लाख जवानों की हो गई। 2008-09 में सेना में करीब 50 सैनिकों की दो माउंटेन डिवीजन शामिल की गईं ताकि अरुणाचल प्रदेश में सीमा सुरक्षा मजबूत हो सके। 2011-12 में तत्कालीन संप्रग सरकार ने समझदारी का परिचय न देते हुए सेना की माउंटेन स्ट्राइक कोर (एमएससी) गठित करने की मांग को मंजूरी दे दी थी। इसमें दो और डिवीजन तथा 70,000 अतिरिक्त सैनिक थे। पहली डिवीजन की तैनाती के बाद मौजूदा राजग सरकार ने दूसरी को स्थगित कर दिया। परंतु जवानों की भर्ती हो चुकी है और उनके पूरे खर्चे हो रहे हैं। सरकार आवंटन नहीं कर रही तो आखिर धन कहां से आ रहा है?

सरकार ने मंजूरी देते समय अतिरिक्त राशि देने की बात कही थी लेकिन वह कागजी ही रह गया है। जब तक वह राशि नहीं मिलती सेना को मौजूदा कोष में से ही व्यय करना होगा। सेना पर इसका असर पड़ रहा है। इससे पहले सन 1962 की जंग के बाद और करगिल संघर्ष के बाद जब सैन्य बल मजबूत किया गया तो सेना को किए जाने वाले आवंटन में भी खासी बढ़ोतरी की गई।

सन 2005 के बाद से आवंटन में वार्षिक 6 से 8 फीसदी की बढ़ोतरी दर्ज की जाती रही। हालांकि 2008 में छठा वेतन आयोग लागू होने के बाद वेतन भत्तों में काफी इजाफा हुआ। 2016 में सातवां वेतन आयोग लागू होने के बाद भी राजस्व आवंटन में तुलनात्मक बढ़ोतरी नहीं की गई। यानी सेना अपने सीमित संसाधनों से ही काम चला रही है। सरकार द्वारा वर्ष 2015-16 में वन रैंक, वन पेंशन (ओआरओपी) लागू करने के बाद लागत और बढ़ गई।

सेना पर एक और बजटीय दबाव है जीएसटी की उच्च दर का। हथियार, टेंट, कपड़े आदि की खरीद पर 18 फीसदी की दर से कर लगता है जबकि सेना हर हथियार पर 28 फीसदी जीएसटी चुकाती है। चूंकि पर सेना पर जीएसटी बिना अतिरिक्त फंड या प्रतिपूर्ति के किया गया इसलिए वित्त मंत्रालय रक्षा के लिए आवंटित फंड का एक बड़ा हिस्सा प्रभावी ढंग से अपने पास ही रख लेता है। इससे सेना हर स्तर पर प्रभावित होती है। इसमें उसके द्वारा की जाने वाली खरीद भी शामिल है।

सरकार ने रक्षा उपकरण आयात पर सीमा शुल्क लगाया है जबकि पहले इसे कर रियायत हासिल थी। यह बात पूंजीगत खरीद और विदेशी उपकरणों के कलपुर्जों की खरीद को प्रभावित करती है। इन दोनों में आयात की अहम हिस्सेदारी है। सीमा शुल्क का लक्ष्य जहां स्वदेशीकरण को बढ़ावा देना है, वहीं इस बात ने सेना की खरीद क्षमता को प्रभावित किया है। इसके अलावा सैन्य स्टोर और उपकरणों पर 10 फीसदी कर लगाया जाता है जबकि वैमानिक घटकों पर 3 फीसदी।

बीते कुछ वर्षों में कई सैन्य यूनिट को सीमा के करीब नए स्थानों पर नियुक्ति दी गई ताकि किसी आपात स्थिति में बिना दूर से संचालन किए उनकी सेवाएं तत्काल हासिल की जा सकें। इसके लिए भी ज्यादा धन आवंटित नहीं किया गया। मौजूदा यूनिट के साथ संसाधन साझा करने का काम सेना पर छोड़ दिया गया। सैन्य यूनिटों पर आतंकी हमलों के बाद 2016-17 में रक्षा मंत्रालय ने संवेदनशील कैंट इलाकों में दीवार खड़ी करने और सीसीटीवी कैमरे लगाने तथा केंद्रीय निगरानी इकाई स्थापित करने की परियोजना को मंजूरी दी। इसके लिए कोई बजट आवंटित न होने से न तो कोई दीवार खड़ी हुई न ही एक भी रुपया व्यय हुआ।

ऐसी खबरें भी आईं कि सेना के पास महज चंद दिनों का गोला-बारूद बचा है। इसके बाद रक्षा मंत्रालय ने जोरशोर से घोषणा की कि वरिष्ठ सैन्य कमांडरों को इस बात के वित्तीय अधिकार दिए जा रहे हैं कि वे 10 दिनों की गहन लड़ाई के लिए जरूरी गोला-बारूद खरीद सकें। परंतु यहां भी मामला फंड आवंटन की घोषणा से आगे नहीं बढ़ सका। ऐसे में अगर कोई खरीद करनी है तो वह सेना के मौजूदा बजट में से ही करनी होगी।

ऐसे में यह उम्मीद करना बेमानी होगा कि अगले सप्ताह बजट में रक्षा आवंटन करते समय राष्ट्रीय सुरक्षा की चुनौतियों का समग्रता में ध्यान रखा जाएगा। एक के बाद एक सरकारों ने वित्त आयोग जैसे संस्थानों की अनुशंसा स्वीकार की जिन्होंने जीडीपी के प्रतिशत के रूप में रक्षा व्यय में लगातार कमी की बात कही। 14वां वित्त आयोग, जिसने 2015-2020 के बीच केंद्र सरकार के वित्त के वितरण को लेकर अनुशंसाएं कीं, उसने अवश्य रक्षा क्षेत्र के राजस्व व्यय को स्थिर रखने की अनुशंसा की। हालांकि जीडीपी के आंकड़े स्वयं विवाद में हैं, ऐसे में यह मानना बेहतर होगा कि रक्षा बजट आवंटन में मामूली वृद्धि ही होगी।

कानाफूसी

बजट को लेकर उत्साहित नहीं

लोकसभा चुनाव में बड़ी जीत दर्ज करने के बाद सत्ता में वापसी करने वाली नई राजग सरकार 5 जुलाई को प्रस्तुत होने वाले बजट की तैयारी में लगी हुई है। इस बीच उद्योग जगत पूरी तरह खामोश नजर आ रहा है जबकि आम तौर पर वह बजट को लेकर काफी मुखर रहता है। वाहनों की बिक्री में लगातार आ रही गिरावट के बीच वाहन उद्योग हालिया सरकारी नियमन को लेकर काफी चिंतित है। इसमें इलेक्ट्रिक वाहनों की ओर प्रस्थान करने का विचार भी शामिल है। अन्य वर्षों के उलट इस बार तमाम वाहन कंपनियों के मुख्य कार्याधिकारियों ने न तो कोई इच्छा प्रकट की है और न ही उनके पास कोई सुझाव है। ऐसा इसलिए है क्योंकि उन्हें लग रहा है कि सरकार वही करेगी जो वह करना चाहती है। ऐसे में कंपनियां बजट को लेकर समय बरबाद करना नहीं चाहतीं।

गलती पे गलती

बुधवार को राष्ट्रपति के अभिभाषण पर धन्यवाद ज्ञापन के दौरान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने उर्दू का एक शेर कहा और उसे उन्होंने 19वीं सदी के मशहूर शायर मिर्जा गालिब द्वारा रचित बताया। कांग्रेस नेता गुलाम नबी आजाद के सबका साथ सबका विकास के वादे के धुंधला पड़ने के आरोप का जवाब देते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि आजादी की आंखों की रोशनी धुंधली पड़ी है क्योंकि वह हर चीज को राजनीतिक चश्मे से देख रहे हैं। मोदी ने कहा, 'ताउम्र गालिब ये भूल करता रहा, धूल चेहरे पर थी और आईना साफ करता रहा।' जल्दी ही सोशल मीडिया पर लोगों ने कहना शुरू कर दिया कि यह शेर गालिब का नहीं है। ऐसा कहने वालों में शायर जावेद अख्तर भी शामिल थे। अख्तर ने लिखा कि यह शेर गालिब के नाम पर सोशल मीडिया में फैलाया गया है। हकीकत तो यह है कि यह शेर भी नहीं है। प्रधानमंत्री ने यही एक गलती नहीं की। उन्होंने शुरुआत में चर्चा में भाग लेने वाले सांसदों का नाम लेते हुए तृणमूल कांग्रेस के नेता डेरेक ओब्रायन को डेरे ओबराय कह दिया।

आपका पक्ष

पंचायत चुनाव में दो बच्चों वाली नीति

उत्तराखंड विधानसभा ने परिवार नियोजन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से दो से अधिक संतान वाले लोगों को पंचायत चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य करने वाला उत्तराखंड पंचायती राज संशोधन विधेयक 2019 बुधवार को पारित कर दिया है। यह एक सराहनीय कदम है क्योंकि आज भी कई लोग दो से अधिक बच्चे को प्राथमिकता देते हैं। कई बार देखा जाता है कि पुत्र की चाह में पति-पत्नी लगातार बच्चों की संख्या बढ़ाते रहते हैं। इससे जनसंख्या वृद्धि हो रही है। हाल ही में संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक मामले के विभाग, पॉपुलेशन ऐंड डिवीजन द्वारा जारी रिपोर्ट के मुताबिक जनसंख्या के मामले में साल 2027 तक भारत चीन से आगे निकल जाएगा। रिपोर्ट बताती है कि भारत की जनसंख्या में 2050 तक 27.3 करोड़ की वृद्धि हो सकती है। संयुक्त राष्ट्र 2019 के वैश्विक जनसंख्या आंकड़ों के मुताबिक भारत की जनसंख्या 136 करोड़ तक पहुंच गई है। बाकी सभी देशों से तुलना करें तो पिछले नौ साल में भारत की जनसंख्या सबसे तेज रफ्तार से बढ़ी। हालांकि दुनिया में सबसे ज्यादा आबादी वाला देश अभी चीन (142 करोड़ से ज्यादा) ही है। आंकड़े बताते हैं कि चीन की जनसंख्या सालाना 0.5 फीसदी से और भारत की जनसंख्या 1.2 फीसदी के दर से बढ़ रही है। बढ़ती आबादी की वजह से कई समस्याएं जन्म ले रही हैं क्योंकि देश में बढ़ती जनसंख्या के मुकाबले संसाधनों की कमी है। बढ़ती जनसंख्या से भारत को गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी, अर्थव्यवस्था पर अतिरिक्त भार और कई अन्य समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। उत्तराखंड के अलावा दूसरे कुछ राज्यों में भी दो बच्चों वाला प्रावधान है लेकिन इसे प्रत्येक राज्य में लागू होना चाहिए जिससे परिवार नियोजन जैसे कार्यक्रम को बढ़ावा मिले और देश की अर्थव्यवस्था की रफ्तार में तेजी आए।

निशांत त्रिपाठी, नागपुर, महाराष्ट्र

उत्तराखंड सरकार ने पंचायत चुनाव लड़ने के लिए दो बच्चों की अधिकतम सीमा तय की है

नई शिक्षा नीति पर न हो अधिक देरी

नई शिक्षा नीति बनाने की बात बीते चार-पांच साल से चल रही है। अब दुबारा भारी बहुमत से सत्ता में आई मोदी सरकार ने नई शिक्षा नीति के मसौदे पर सुझाव के लिए एक महीने का समय और दिया है। किसी भी नीति पर सुझाव मांगना अच्छा बात है। लेकिन सुझाव के नाम पर नीति में होने वाली देरी ठीक परंपरा नहीं है। सरकार को नई शिक्षा नीति के मसौदे पर सुझाव के बढ़ाई गई एक महीने की अवधि के बाद और मौके नहीं देने चाहिए। मसौदे पर सुझाव मिलने के बाद जल्द से जल्द नई शिक्षा नीति घोषित करनी चाहिए। यह नीति बनाने से ही काम नहीं चलेगा, बल्कि शिक्षा नीति को कारगर तरीके से क्रियान्वित भी करना होगा। नई शिक्षा नीति के मसौदे में शिक्षा का अधिकार कानून के दायरे को व्यापक बनाने, राष्ट्रीय शिक्षा आयोग बनाने, शिक्षकों की सहायता के लिए तकनीक के इस्तेमाल को प्रोत्साहित करना आदि शामिल किए गए हैं। इसमें गरीब व वंचित वर्ग के बच्चों की शिक्षा के लिए विशेष प्रावधान करने चाहिए। नई शिक्षा नीति यह सुनिश्चित करने वाली हो कि शिक्षा के नाम कारोबार करने वाले शैक्षिक संस्थान लोगों से अपनी मर्जी के मुताबिक शुल्क न वसूलें। नई शिक्षा नीति में रोजगारपरक शिक्षा को बढ़ावा देने वाले उपाय किए जाने चाहिए।

कुशाग्र सिंह, जयपुर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।